अध्याय–11
आधुनिक भारतीय मूर्तिकला

आधुनिक भारतीय मूर्तिकला का प्रारम्भ 19वीं शताब्दी से माना जाता है, जो कि तत्कालीन समय में हुए परिवर्तनों का परिणाम था। इस समय भारतीय पुनर्जागरण के कलाकारों में आधुनिक भारतीय मूर्तिकला के मार्ग को सुगम बनाने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। जिस प्रकार आधुनिक भारतीय चित्रकला को प्रारम्भ करने का श्रेय अवनीन्द्रनाथ टैगोर को दिया जाता है उसी प्रकार आधुनिक भारतीय मूर्तिकला को प्रारम्भ करने का श्रेय रामकिंकर बैज को दिया जाता है। रामकिंकर बैज को आधुनिक भारतीय मूर्तिकला का जनक भी कहा जाता है। ये अनेक परवर्ती मूर्तिकारों के प्रेरणा स्रोत रहे हैं।

18वीं शताब्दी में भारतीय मूर्तिकला निष्प्राण होती जा रही थी, इस समय भारतीय मूर्तिकला को ब्रिटिश संरक्षण व प्रोत्साहन नहीं मिला, जबकि इस समय ब्रिटिश साम्राज्य का प्रभाव बढ़ चुका था। ब्रिटिश शासन के दौरान अंग्रेजों ने भारत के विभिन्न स्थानों पर कला विद्यालयों की स्थापना की। इन कला विद्यालयों में कला के क्षेत्र में यूरोपीय पद्धति को बढ़ावा दिया जाता था। इस समय के मूर्तिशिल्पों में पाश्चात्य प्रभाव जैसे यथार्थवाद, घनवाद, भविष्यवाद, अभिव्यंजनावाद आदि का समावेश दिखाई देता है। 19वीं सदी के अंत तक स्वदेशी आंदोलन के कारण स्वदेशी कला के पुनर्जागरण की ओर कलाकारों का ध्यान आकर्षित हुआ। इस समय कलकत्ता के गवर्नमेंट स्कूल ऑफ आर्ट के प्रिंसिपल ई.वी. हैवल व अवनीन्द्र नाथ ठाकुर ने भारतीय कलाओं की विशेषताओं को विकसित करने का प्रयास किया। इन्हीं प्रयासों के परिणामस्वरूप कलकत्ता में इण्डियन सोसायटी ऑफ आर्ट की स्थापना हुई। इस समय के मूर्तिकारों में रोहित (1868–1895), फणीन्द्र नाथ बोस (1888–1926), हरिण्यमय राय चौधरी (1884–1862), देवी प्रसाद राय चौधरी (1899–1975) आदि प्रमुख हैं।

20वीं शताब्दी के प्रारम्भ में विदेशी मूर्तिशिल्पों का आकर्षण सम्पन्न लोगों में अत्यधिक था। इस वर्ग के लोग अपने घरों में विदेशी मूर्तिशिल्पों की सजावट करके अपनी सम्पन्नता का प्रदर्शन करने में गौरव महसूस करते थे। इस प्रकार की विपरीत परिस्थितियों में यूरोपीय शैली से हट कर मूर्तिशिल्पों में भारतीय तत्वों का समावेश करने का साहस देवी प्रसाद राय चौधरी ने दिखाया। राम किंकर बैज ने आधुनिक भारतीय मूर्तिकला में नए आयामों की स्थापना कर इसे और अधिक सुदृढ़ता व समृद्धि प्रदान की। इन्होंने अपने मूर्तिशिल्पों द्वारा जन–साधारण को गौरवान्वित किया। इनके मूर्तिशिल्पों में विषयवस्तु व बाह्य परिवेश में अटूट सम्बन्ध व समन्वय दिखाई देता है। इन मूर्तिशिल्पों में यथार्थवाद, घनवाद व अतियथार्थवाद प्रतिबिम्बित होता है।

आधुनिक भारतीय मूर्तिकला को और आगे गति प्रदान करने में देवी प्रसाद राय चौधरी एवं राम किंकर बैज के शिष्यों का योगदान काफी महत्त्वपूर्ण रहा है, जिनमें धनराज भगत, पी. वी. जानकीराम, रजनीकांत पंचाल, ए.एम.डाबरीवाला व राघव कनेरिया आदि प्रमुख हैं।

बंगाल के मूर्तिकारों ने न केवल अपनी निज शैली को विकसित किया बल्कि उन्होंने अपने मूर्तिशिल्पों में परम्परागत व अधारभूत तत्वों तथा दर्शन में पश्चातय कला शैली व उसके तत्वों को सम्बन्धित किया। इससे भारतीय मूर्तिकला आधुनिक प्रवृत्तियों व विविधता की दृष्टि से काफी समृद्ध हुई। इन मूर्तिकारों में सुधीर रंजन खस्तगीर (1907–1974), प्रदोष दास गुप्ता (1912–1991), चिंतामणीकर (1915–2005) शंखों चौधरी

(1916–2006), सोमनाथ होर (1921–2006), मीरा मुखर्जी (1923–1998) आदि प्रमुख हैं। चिंतामणीकर के मूर्तिशिल्पों में वर्तमान, भविष्य व भूत का समावेश एक साथ देखा जा सकता है। शंखो चौधरी के मूर्तिशिल्पों में लोक एवं आदिवासी कला का समन्वय दृष्टिगत होता है। सोमनाथ होर ने युद्ध व अकाल की विभीषिका के मार्मिक भावों को अपने मूर्तिशिल्पों में प्रभावी रूप से अभिव्यक्त किया है।

आज़ादी से पहले व बाद के कुछ दशकों तक पोट्रेट और यथार्थता पर मूर्तिशिल्प बने। समय के साथ–साथ मूर्तिकला भी नवाचारों के पथ पर बढ़ती चली गई तथा विभिन्न प्रकार के अमूर्त व विरूपित मूर्तिशिल्पों का तक्षण हुआ। यात्रा के इस सोपान में ऊषा रानी हूजा (1923–2013), सरवरी राय चौधरी (1933–2012), विपिन गोस्वामी (1934), शंकर घोष (1934), दिलीप सरहर (1944), मणिक तालुकदार (1944) आदि ने पश्चमी शैली से अलग नए आयामों को समावेशित करके भारतीय शैली को समृद्ध किया।

40 के दशक में भारतीय मूर्तिकला पश्चातय दासता से मुक्त होकर कला के उन्मुक्त गगन में नई ऊँचाईयों को छूने लगी। परवर्ती मूर्तिकारों के मूर्तिशिल्पों में शैली विषय व माध्यम के दृष्टिकोण से नूतन प्रवृत्तियों का समन्वय स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। इन्होंने मूर्तिशिल्पों के निर्माण में माध्यम व विषय वस्तु की दृष्टि से अपना दायरा काफी विस्तृत कर लिया। ये मूर्तिकार मूर्तिशिल्पों की रचना में प्रस्तर (जैसे संगमरमर, ग्रेनाइट आदि), धातु (जैसे कांस्य, स्टील आदि), लकड़ी, प्लास्टिक, फाइबर (रेशे), ग्लास, चमड़ा, अनुपयोगी वस्तुओं, मोम, पेपरमेशी आदि माध्यमों का प्रयोग कर रहे हैं। इन मूर्तिकारों में बसन्त के. शर्मा, रजत घोष, ओम प्रकाश खेर, रजत घोष, ध्रुव मिस्त्री, विवान सुन्दरम्, राजेन्द्र मिश्रा (1950), अशोक गोड़ (1965), ज्ञान सिंह (1960), अंकित पटेल (1957), सी. पी. चौधरी (1951), भुपेश कावडिया (1969), आदि प्रमुख है, जिन्होंने अपनी प्रतिभा और कुशलता से अपने मूर्तिशिल्पों में नवीन आयामों की स्थापना की है।

मूर्तिशिल्प के क्षेत्र में सतत रूप से होते परिवर्तनों का ही परिणाम है कि आज के मूर्तिशिल्पों के स्वरूप में काफी भिन्नता देखने को मिलती है, जिसमें मूर्तिकारों ने निजस्व व नवीनता को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है।

आधुनिक मूर्तिकला की प्रमुख विशेषताऐं :–

1 परम्परावादी बन्धन से मुक्त।
2 परम्परा के विकासवादी स्वरूप का मूर्तन।
3 विषय, माध्यम व अभिव्यक्ति में स्वतंत्रता।
4 सरलीकृत स्वरूप का विकास।
5 स्वतंत्र मूर्तिशिल्पों का मूर्तन।
6 वैश्विक दृष्टिकोण का विकास।
7 वैश्विक कला सिद्धान्तों का समन्वय।

राम किंकर बैज (1906–1980 ई.) :–

राम किंकर बैज ने नवीन कला आंदोलन को गति प्रदान करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इनका जन्म पश्चिमी बंगाल के बांकुरा में 26 मई, 1906 को आर्थिक व सामाजिक रूप से पिछड़े परिवार में हुआ था। इन्होने शांति निकेतन से कला में डिप्लोमा प्राप्त किया तथा शिक्षा ग्रहण करके स्वतंत्र रूप से अपनी कला साधना में लग गए। यहीं पर इन्होंने अपना समय कला को समर्पित किया और शिल्पकला विभाग के विभागाध्यक्ष भी रहें। इनकी कला शैली में निज शैली के नए प्रतिमानों की स्थापना हुई। इन्होंने विभिन्न माध्यमों (जैसे मिट्टी, प्रस्तर, कंकरीट, कांस्य आदि) में मूर्तिशिल्पों की रचना की। इनके प्रमुख विषय भारतीय तथा जनसामान्य से प्रभावित रहे। इनकी कला शैली पर लोक कला जैसी सरलता, सहजता व ज्यामितीयता का समन्वय स्पष्टतः दिखाई देता है। इनके मूर्तिशिल्पों में ''संथाल परिवार'', ''मिल कॉल'', ''महात्मा बुद्ध'', ''मिथुन'', ''सुजाता'' व रवीन्द्र नाथ टैगोर का आवक्ष (पोट्रेट) आदि प्रमुख हैं।

ये प्रथम भारतीय मूर्तिकार हैं जिन्होंने सीमेन्ट व कंकरीट माध्यम का प्रभावशाली ढ़ंग से प्रयोग कर मूर्तिशिल्पों की रचना की। इस माध्यम में इन्होनें मूर्तिशिल्पों में एक विशेष प्रकार के पोत (टेक्सचर) का सृजन किया, जो इनके मूर्तिशिल्पों को अन्य से एक अलग एवं विशिष्ट पहचान देते हैं।

इनके व्यक्तित्व व कला से साहित्यकार व फिल्मकार भी प्रभावित हुए बिना नहीं रहे। इन पर कई पुस्तकों की भी रचना हुई जैसे आर. शिवा कुमार द्वारा रचित ''रामकिंकर्स यक्ष यक्षी'', सोमेन्द्र नाथ बंदोपाध्याय द्वारा रचित ''माई डेज़ विथ राम किंकर'' व प्रो. ए. रामचन्द्रन द्वारा रचित 'द मैन एण्ड द

चित्र संख्या–1 मिल कॉल

चित्र संख्या–2 संथाल फैमिली

फिल्म का निर्माण भी प्रारम्भ किया गया था, लेकिन ऋत्विक घटक की मृत्यु हो जाने के कारण यह फिल्म अधूरी रह गई।

इनके मूर्तिशिल्पों में अभिव्यंजनावाद व अतियथार्थवाद का प्रभाव देखने को मिलता है। इनके द्वारा जीवन पर्यन्त कला के क्षेत्र में दिये गये योगदान के लिये इन्हें पद्मभूषण (1970ई.) से भी सम्मानित किया गया था। 2 अगस्त, 1980 ई. को इनका देहान्त कोलकाता में हुआ जिससे कला जगत को अपूरणीय क्षति हुई।

मिल कॉल मूर्तिशिल्प की रचना सन् 1956 में राम किंकर बैज द्वारा की गई, जो कि शांति निकेतन में स्थापित है। इसका ढ़ांचा बनाने में लोहे का उपयोग किया गया तथा जिस पर आकार बनाने हेतु सीमेन्ट, रोड़ी व बज़री का उपयोग किया है। इस स्मारकीय मूर्तिशिल्प में दो स्त्रियों व बालक को तेज गति से जाते हुए दर्शाया गया है। ये चावल की मिल में काम करने वाली मजदूर स्त्रियाँ हैं, जिनको मिल के सायरन की आवाज सुनाई दी है जिससे वे मिल की तरफ तेजी से प्रस्थान कर रही हैं। इनके पास कपड़े सुखाने का समय भी नहीं है इसलिए वे दोड़ते हुए कपड़े सुखा रही हैं। (चित्र संख्या–1) इस संयोजन में आकृतियों को क्लिष्ठ मुद्राओं में गति के साथ दिखाया है। तेज गति दिखाने के लिये स्त्रियों के वस्त्रों को उड़ते हुए, पैरों से मिट्टी को उछलते हुए प्रदर्शित किया गया है। एक स्त्री को आगे की ओर देखते हुए व दूसरी को पीछे की ओर देखते दिखाया है।

बालक का मुख ऊपर की ओर देखते हुए दिखाया है। इससे श्रमिक वर्ग की महिलाओं के परम्परा व आधुनिकता तथा वर्तमान व भविष्य की बीच के संघर्ष को कलाकार ने सुन्दर अभिव्यक्ति प्रदान की है। इस मूर्तिशिल्प में भारतीय और पश्चातय तत्वों का समन्वय तथा भारतीय विषय वस्तु के रूप में संथाल जाति के परम्परागत जीवन का आधुनिकता के साथ समन्वय स्थापित करने का द्वंद्व का कुशलता के साथ प्रस्तुतिकरण किया गया है। इस मूर्तिशिल्प में कलागत दृष्टि से गति, भाव, लावण्य व प्रमाण आदि का समावेश श्रेष्ठ रूप से हुआ है।

संथाल फैमिली मूर्तिशिल्प की रचना सन् 1938 में शांति निकेतन में की गई जिसमें एक संथाल परिवार के एक पुरूष व एक महिला को दिखाया है। महिला के बांऐ हाथ में एक शिशु जबकि पुरूष के बांऐ कन्धे पर बड़ा कॉवर है, जिसके आगे की तरफ वाली टोकरी में भी एक शिशु को बैठे दिखाया है जिसके भार को संतुलित करने के लिए पिछली टोकरी में सामान रखा दिखाया है। साथ ही एक श्वान (कुत्ता) को भी दिखाया है। महिला को सिर पर भी टोकरी व दरी–पट्टी रखे दिखाया है। यह शिल्प आदम कद से डेढ़ गुना ऊँचा है।

प्रस्तुत मूर्तिशिल्प में भी जनजाति कृषक गरीब संथाल परिवार का जीवन्त प्रस्तुतीकरण किया गया है। यह परिवार जीविकोपार्जन हेतु एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाते हुए दिखाया है कलागत दृष्टि से इसमें संतुलन व सम्बद्धता के सिद्धान्त की पालना की गई है। साथ ही अतियथार्थवाद व अभिव्यंजनावाद का प्रभाव भी है।(चित्र संख्या – 2)

शरीर की रचना को जीवन्तता के साथ दिखाया है, स्त्री देह को कोमलता लिए दिखाया है। शरीर की मुद्रा से गति का आभास होता है तथा चेहरे के भावों को सार्थक किया है।

देवी प्रसाद राय चौधरी(1899–1975 ई.) :–

इनका जन्म 15 जून, 1899ई. को तेजहट (आधुनिक बंगलादेश) में हुआ था। ये अवनीन्द्र नाथ टैगोर के प्रमुख शिष्यों में से एक थे। मूर्तिकला के साथ–साथ चित्रकला में भी निपुण थे। इन्होंने ऑरियन्टल आर्ट स्कूल से शिक्षा ग्रहण की तथा यहीं पर शिक्षक के रूप में भी कार्य किया। इन्होंने मूर्तिकला का प्रारम्भिक प्रशिक्षण हिरण्यमय् राय चौधरी के निर्देशन में लिया। इन्होंने बंगाल स्कूल की परम्परा व पद्धतियों से हटकर निजी शैली का विकास किया। इनके मूर्तिशिल्पों में सामान्य वर्ग के जीवन संघर्ष को बखूबी साकार रूप प्रदान किया है। इनकी प्रसिद्धी चित्रकार की अपेक्षा मूर्तिकार के रूप में अधिक रही। इन्होंने अपने मूर्तिशिल्पों के माध्यम से रोमांसवादी प्रवृत्ति का सूत्रपात किया। इनके इन्हीं प्रयासों के फलस्वरूप मूर्तिकला के क्षेत्र में प्रयोगवादी विचारधारा का विकास हुआ। बाद में ये आगामी प्रशिक्षण हेतु इटली गए, जिसका प्रभाव (पश्चिमी प्रभाव) इनकी मूर्तिशिल्पों में आया। इसके पश्चात उन्होंने अपना अध्ययन बंगाल स्कूल ऑफ आर्ट से किया। 1928 ई. में चैन्नई (मद्रास) गए तथा यहाँ के गवर्नमेंट स्कूल ऑफ आर्ट में अध्ययन किया तथा प्राचार्य पद पर भी कार्य किया। ये राष्ट्रीय ललित कला अकादमी के संस्थापक अध्यक्ष भी रहे। कला के क्षेत्र में विशिष्ट योगदान देने के लिए सन् 1958 में इन्हें पद्मभूषण से सम्मानित किया गया। इन्हें शरीर सरंचना के बारे में गहन जानकारी थी जो इनके मूर्तिशिल्पों में देखी जा सकती है। इन्होंने विभिन्न माध्यमों (जैसे मिट्टी, प्लास्टर ऑफ पेरिस तथा कांस्य) में मूर्तिशिल्पों की रचना की है। इनके मूर्तिशिल्पों में ''शहीद स्मारक'' (पटना), ''श्रम की विजय'' (चैन्नई) व ''महात्मा गाँधी'' (1956ई.)(कांस्य) आदि प्रमुख हैं। इनके आदमकद मूर्तिशिल्पों में गति, ऊर्जा एवं भाव का अद्भुत समन्वय है। 15 अक्टूबर, 1975 को इनका देहान्त हो गया।

शहीद स्मारक मूर्तिशिल्प की स्थापना सन् 1956 में पटना

चित्र संख्या–3 शहीद स्मारक

सचिवालय भवन के बाहर की गई। कांस्य धातु से बनी इन मूर्तियों की ढलाई पहले इटली में की गई थी तत्पश्चात् इन्हें पटना (बिहार) में स्थापित किया गया (चित्र सं–3)।

इस संयोजन में सात युवकों को दिखाया गया है जिन्होंने राष्ट्रीय ध्वज फहराने के प्रयास में अपने प्राणों का बलिदान दिया। भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान सन् 1942 में डॉ. अनुग्रह नारायण को पटना में राष्ट्रीय ध्वज फहराने का प्रयास करने के कारण गिरफ्तार कर लिया गया था। जिसकी प्रतिक्रिया के परिणामस्वरूप 11 अगस्त, 1942 को पटना सचिवालय पर राष्ट्रीयध्वज फहराने के संकल्प के साथ एक जुलुस आगे बढ़ रहा था। अंग्रेजों ने इन युवा देशभक्त छात्रों को निर्ममता से गोली मार दी थी। इसी घटना में सात युवक शहीद व अनेक घायल हो गए। इस मूर्तिशिल्प में देवी प्रसाद राय चौधरी ने ''शहीद स्मारक'' के रूप में घटना को जीवन्त किया है। शहीद स्मारक पर उन सात युवा शहीदों के नाम उत्कीर्ण हैं, जिन्होंने अपने प्राणों का बलिदान दिया था। ये नाम निम्नलिखित हैं:–

उमाकान्त प्रसाद सिन्हा (कक्षा 9), रामानन्द सिंह (कक्षा 9), देवीपदा चौधरी (कक्षा 9), राम गोविन्द सिंह (कक्षा 9), राजेन्द्र सिंह (कक्षा 10), सतीश प्रसाद झां

चित्र संख्या–4 श्रम की विजय

इस संयोजन में प्रथम युवक को राष्ट्रीय ध्वज लिये हुए आगे की ओर बढ़ते हुए दिखाया है। तीन युवकों को घायल अवस्था में निढ़ाल होकर गिरते–पड़ते दिखाया है। एक युवक दूसरे घायल युवक को सम्भालते हुए आगे बढ़ने की मुद्रा में है, दो अन्य युवक सीना तान कर आगे की ओर बढ़ रहे हैं। प्रस्तुत मूर्तिशिल्प में तत्कालीन अंग्रेजों की क्रूरता, शहीदों के जोश के भाव (आत्मविश्वास) को शारीरिक मांसपेशियों के उभारों के साथ अदभुत प्रकार से अभिव्यक्त किया है। यह मूर्तिशिल्प लाइफ–साइज़ में निर्मित है। चेहरे के भाव देशभक्ति से ओतप्रोत हैं।

श्रम की विजय मूर्तिशिल्प की रचना देवी प्रसाद राय चौधरी ने कांस्य माध्यम मे की तथा इसकी स्थापना सन् 1959 में चैन्नई में समुद्र के किनारे की गई। इस स्थल के निकट देश का प्रथम श्रमिक दिवस मनाया गया था। इस संयोजन में चार व्यक्तियों द्वारा एक चट्टान को बलपूर्वक लुढ़काने में होने वाले कठिन परिश्रम व युक्ति को बहुत ही प्रभावशाली ढ़ंग से प्रदर्शित किया गया है। साथ ही कठिन श्रम के दौरान होने वाली शारीरिक मुद्राओं व शरीर की मांस–पेशियों के खिंचाव को वास्तविक अभिव्यक्ति दी है। चट्टान उलटने के काम में लगे चारों श्रमिकों के शरीर पर एक छोटा अधोवस्त्र तथा सिर पर पतला कपड़ा है। ये श्रमिक लकड़ी के कुन्दे द्वारा विशाल चट्टान को हटाने के लिये प्रयासरत है। इसमें श्रमिकों के सामूहिक परिश्रम व प्रयास द्वारा बड़े व कठिन कार्य को सफलतापूर्वक निष्पादित करने की कला व तकनीक को प्रदर्शित किया गया है।

इसमें शक्ति एवं गति का प्रदर्शन अप्रतिम है। यथार्थवादी शैली का पूर्ण प्रभाव हम देख सकते हैं। जनसामान्य वर्ग के जीवन के प्रति संघर्ष को सशक्तता के साथ दिखाया है।(चित्र संख्या – 4)

शंखों चौधरी(1916–2006 ई.) :–

इनका जन्म 25 फरवरी 1916 को संथाल परगना, बिहार में हुआ। ये राम किंकर बैज के शिष्य थे। इन्होंने विभिन्न माध्यमों में आधुनिक कला के आयामों, यथार्थता, सरलता आदि को साकार करते हुए अनेक मूर्तिशिल्पों का निर्माण किया। इन्होंने बड़ोदरा विश्वविद्यालय में एक अलग शिल्प कार्यशाला की स्थापना की। इस कार्यशाला में इन्होंने बीस सालों तक अध्यापन कार्य करवाया। 1939 इन्होंने कला में स्नातक की उपाधि शांति निकेतन से प्राप्त की। सन् 1945 में इन्होंने कला भवन शांति निकेतन से ललित कला में डिप्लोमा, मूर्तिकला में

विशेष योग्यता के साथ किया। 1945 में इन्होंने धातु ढलाई की नेपाली पद्धति का अध्ययन किया। 1947 में यूरोप की यात्रा की तथा इंग्लैण्ड व पेरिस में कार्य भी किया। 1949 से 1970 तक ये बड़ौदा विश्वविद्यालय में मूर्तिकला विभाग के विभागाध्यक्ष रहे।

इन्हें अनेक पुरस्कारों से सम्मानित किया गया जैसे– ललित कला अकादमी के राष्ट्रीय पुरस्कार (1956), पद्मश्री (1971), कालीदास सम्मान, ललित कला रत्न (2004) आदि। इनके मूर्तिशिल्प में अन्तराल का बहुत महत्व है, अन्तराल के माध्यम से इन्होंने मूर्तिशिल्पों में गतित्व प्रदान किया है। इनके मूर्तिशिल्पों में नारी आकृति, वन्य जीवन से सम्बन्धित विषय वस्तु को प्रमुखता से साकार किया है। इन्होंने लकड़ी, प्रस्तर, धातु, टेराकोटा व संगमरमर (सफेद, काला) आदि विविध माध्यमों में अपनी कला में मौलिकता का प्रदर्शन किया है।

27 अगस्त, 1906 को दिल्ली में इनका देहान्त हो गया। इन्होंने जीवन पर्यन्त कला की साधना करते हुए विभिन्न संस्थानों को कला के क्षेत्र में संरक्षण प्रदान किया। कार्ल खण्डालवाला के अनुसार इन्होंने अभिव्यक्ति के किसी खास सम्प्रदाय को अपने ऊपर हावी नहीं होने दिया।

प्रमुख मूर्तिशिल्प– पिज़न, पिकॉक, कॉक (1951ई.), बर्ड, हैड ऑफ गर्ल (1958ई.), टॉएलिट, खड़ी आकृतियाँ,ˋ.कर्व आकृतियाँ एवं अनेक शीर्षकहीन आकृतियाँ आदि।

टॉयलेट यह मूर्तिशिल्प 36x30x66.5 सेमी का प्रस्तर (पाषाण) से बना हुआ है। इस मूर्तिशिल्प में एक नारी आकृति को बैठी हुई मुद्रा में सरलीकृत रूप में प्रस्तुत किया गया है। दोनों हाथ सिर के पीछे की ओर कर रखे हैं। इसमें रिक्त स्थान के माध्यम से रिक्तता को प्रदर्शित किया गया है। इस मूर्तिशिल्प में त्रि–आयामी प्रमाण के साथ–साथ ज्यामितीय (घनवादी) प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। मूर्तिशिल्प में मुख के नयन नक्ष को मात्र आभास द्वारा दिखाया है (चित्र सं–5)।

पक्षी मूर्तिशिल्प स्टेनलेस स्टील से बना है तथा 62.2x25.4x20.3 सेमी आकार का है । इस मूर्तिशिल्प को एक लकड़ी के आधार पर लगाया गया है। यह मूर्तिशिल्प स्टील धातु का बना है, इसलिए इस पर पड़ रहे छाया–प्रकाश का प्रभाव अत्यंत आकर्षक है। इन्होंने धातु मूर्तिशिल्पों में वक्राकारों के प्रयोग से शिल्पों को जीवन्तता प्रदान की है। (चित्र सं–6)

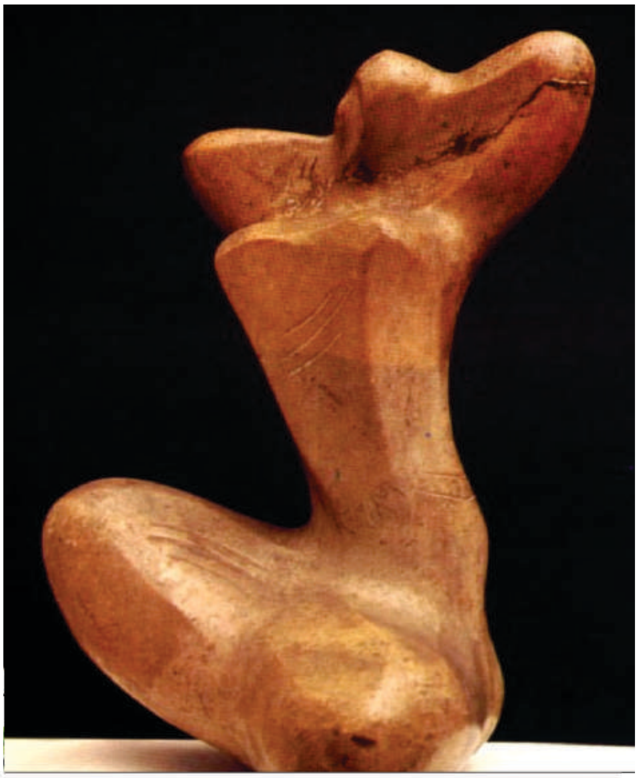

चित्र संख्या–5 टॉयलेट

चित्र संख्या–6 पक्षी

धनराज भगत (1917–1988ई.)

इनका जन्म 1917ई. में लाहौर में हुआ था। इन्होंने मूर्तिकला में डिप्लोमा स्तर की शिक्षा मेयो कॉलेज ऑफ आर्ट, लाहौर से प्राप्त की। ये कला महाविद्यालय दिल्ली में मूर्तिकला विभाग के विभागाध्यक्ष के पद पर भी कार्यरत रहे तथा 1977 में यहाँ से सेवानिवृत हुए। प्रयोगधर्मी व अपारम्परिक कलाकारों मे इनका नाम प्रमुखता में लिया जाता है। इन्होंने पेपरमेशी, धातु, काष्ठ, प्रस्तर व सीमेन्ट आदि विविध माध्यमों में अपने मूर्तिशिल्पों की रचना की। इनके मूर्तिशिल्पों में बाह्य आकार सपाट व चिकनापन लिए हुए है तथा इनमें लम्बाई, कोमलता, लय और गति जैसी विशेषताएं प्रमुखता से प्रदर्शित होती हैं। इन्होंने मुख्यतः अमूर्तवादी शैली में कार्य करते हुए विभिन्न मूर्तिशिल्पों की रचना की है जिनमें द किंग, बांसुरी वादक, सितार वादक, द किस, कॉस्मिक मैन, स्पिरिट ऑफ वर्क, शीर्षक हीन (घोड़ा) व मोनार्क श्रृंखला आदि प्रमुख हैं। इन्होंने मूर्तिशिल्पों में ज्यामितीयता व ऊपर से यांत्रिक पदार्थों जैसे कील, तार, पेच, आदि लगाने का नवीन प्रयोग किया है।

इनकी आकृतियों में प्राचीन व आधुनिक कला का अद्भुत समावेश किया गया है। इनकी कला साधना को 1977 में पद्मश्री से सम्मानित किया गया। सन्1988 में 71 वर्ष की आयु में इनका निधन हो गया। इनके नाम पर सन् 2010 में राजकीय कला महाविद्यालय चण्डीगढ़ में ''धनराज भगत स्कल्पचर पार्क'' की स्थापना हुई।

धनराज भगत की इस कृति ''कॉस्मिक मैन'' का आकार 171x81x22 सेमी है, जिसको कि सीमेन्ट व प्लास्टर से बनाया गया है। वर्तमान में यह मूर्तिशिल्प ललितकला अकादमी, नई दिल्ली में संग्रहित है। इस मूर्तिशिल्प में ज्यामितीय आकार में मानव दिखाया है, जिसके ऊपरी भाग में अर्ध–चन्द्रमा स्थित है जो यह दर्शाता है कि यह कॉस्मिक मैन (अंतरिक्ष मानव) है। इसमें अमूर्तवादी शैली का प्रभाव स्पष्ट है। (चित्र सं–7)।

धनराज भगत ने ''शीर्षकहीन मोनार्क'' शृंखला के अन्तर्गत आकृति मूलक विशेषता लिए हुए मूर्तिशिल्पों की रचना की है। चित्र में दर्शाए गए शीर्षकहीन (मोनार्क) मूर्तिशिल्प 44.4x24.1x17.7 सेमी आकार का है। इसकी रचना में लकड़ी,

चित्र संख्या–7 कॉस्मिक मैन

चित्र संख्या–8 मोनार्क

ताम्र पत्र व कीलों का उपयोग किया गया है। मोनार्क श्रृंखला में शासक (राजा) को जन प्रतिनिधि के रूप में प्रतीकात्मक रूप से प्रदर्शित किया है। मूर्तिशिल्प को अलंकृत करने में धातु पत्रों व कीलों का उपयोग किया गया है। लकड़ी में खुदाई कर बनाई आकृतियाँ खुरदरापन लिए हुए है। यह मूर्तिशिल्प धनराज भगत के निजी संग्रह में सुरक्षित है।(चित्र संख्या–8)

सतीश गुजराल (1925ई.) :–

इनका जन्म 25 दिसम्बर, 1925 में झेलम (पंजाब) में हुआ था, वर्तमान में यह स्थान पाकिस्तान में स्थित है। समकालीन मूर्तिकारों में इनका विशेष स्थान है। ये मूर्तिकार के साथ–साथ प्रसिद्ध चित्रकार, वास्तुकार, लेखक व ग्राफिक डिज़ाइनर भी हैं। आठ वर्ष की आयु में दुघर्टनावश इनकी श्रवण शक्ति क्षीण हो गई, जिसका प्रभाव इनके अध्ययन पर भी पड़ा लेकिन इन्होंने अपना अधिकांश समय कला के प्रति समर्पित किया तथा इकबाल व गालिब की रचनाएं भी पढ़ीं, जिसका उनके व्यक्तित्व पर गहरा प्रभाव पड़ा। 13 वर्ष की आयु में ये लाहौर आए तथा यहाँ उन्होंने मेयो स्कूल ऑफ आर्ट में अन्य विषयों के साथ मृतिकाशिल्प और ग्राफिक डिजाइन के क्षेत्र में अध्ययन किया। सन् 1944 में इन्होंने सर जे. जे. स्कूल ऑफ आर्ट, मुम्बई में प्रवेश लिया, लेकिन स्वास्थ्य संबंधी परेशानी होने के कारण सन् 1947 में इन्हें अपना अध्ययन बीच में ही छोड़ना पड़ा। सन् 1952 में इन्हें पलासियों नेशनल डि बेलास आर्ट, मैक्सिकों में अध्ययन करने हेतु छात्रवृति मिली। बाद में इंपीरियल सर्विस कॉलेज, विंडसर, यू.के. (ब्रिटेन) में भी इन्होंने विधिवत् रूप से अध्ययन किया। सन् 1947 में हुए भारत विभाजन का प्रभाव इनकी कलाकृतियों विशेष रूप चित्रों में देखने को मिलता है।

सन् 1952 से 1974 तक इन्होंने अपनी कलाकृतियों की प्रदर्शनी विश्व के अनेक बड़े शहरों में लगाई, वास्तुकार के रूप में इन्होंने बेल्जियम के दूतावास का भी डिजाइन तैयार किया जिसे 20वीं सदी की श्रेष्ठतम् भवनों की सूची में स्थान प्राप्त हुआ है। ये भारत में प्रथम कोलाज कलाकार के रूप में भी जाने जाते हैं। इनके जीवन और काम पर आधारित कई वृतचित्र (डॉक्यूमेंट्री) बने हैं जिनमें से एक वृतचित्र '' अ ब्रश विथ लाइफ'' सन् 2012 में जारी हुआ है। जिसकी अवधि 24

चित्र संख्या–9 स्ट्रीट सिंगिंग कपल

मिनट की है। इनके बड़े भाई इन्द्र कुमार गुजराल भारत के पूर्व प्रधानमंत्री थे। इनका पुत्र मोहित गुजराल एक प्रसिद्ध वास्तुकार है तथा पुत्री कल्पना ज्वेलरी डिज़ाइनर व दुसरी पूत्री रसील इंटीरियर डिज़ाइनर है।

बहुमुखी प्रतिभा के धनी सतीश गुजराल को देश–विदेश में अनेक पुरस्कारों से सम्मानित किया जा चुका है। सन् 1999 में भारत सरकार ने इन्हें पद्मभूषण से सम्मानित किया। इन्हें दो बार चित्रकला के लिए व एक बार मूर्तिकला के लिए कला का राष्ट्रीय पुरस्कार भी मिल चुका है। इन्हें मैक्सिको का ''लियानार्डो द विंसी'' पुरस्कार तथा बैल्जियम के राजा का ''आर्डर ऑफ क्राउन'' सम्मान भी मिला है। इन्होंने सिरेमिक, काष्ठ, पाषाण एवं धातु आदि माध्यमों में

मूर्तिशिल्पों की रचना की है। इनके मूर्तिशिल्पों पर आस–पास के परिवेश व परिस्थितियों का गहरा प्रभाव पड़ा है। लोहड़ी के त्यौहार में प्रज्वलित होने वाली अग्नि में जलती हुई लकड़ियों के विविध स्वरूपों से प्रभावित होकर उन्होंने जली हुई लकड़ी से मूर्तिशिल्पों की रचना की। भैंसों के गले में लटकती घण्टियों के टेक्सचर (पोतों) से प्रेरित होकर उन्होंने विभिन्न धातु आकृतियों का निर्माण किया। ग्रेनाइट के विभिन्न रंगों व पोतों से प्रभावित होकर उन्होंने मानव व जानवरों के विभिन्न मूर्तिशिल्पों की रचना की। गुजराल ने स्मारकीय कांस्य मूर्तिशिल्पों की रचना की जो कि मानव व यांत्रिक विशेषताओं को लिए हुए हैं। इनकी ऊचांई लगभग 11 से 12 फीट तक है। इनमें भावनाओं व ऊर्जा की सशक्त अभिव्यक्ति की है। गुजराल के अनुसार उनके मूर्तिशिल्पों की रचना पूर्व निर्धारित नहीं होती है। इनके मूर्तिशिल्प छोटे व बड़े आकार के हैं। इनका मानना है कि बड़े मूर्तिशिल्पों से अभिव्यक्ति अपेक्षाकृत और अधिक अच्छे प्रकार से होती है। इनके मूर्तिशिल्पों में स्ट्रीट सिंगिंग कपल तथा मानव, मशीन और जानवर के शीर्षकहीन मूर्तिशिल्प प्रमुख हैं। जली हुई लकड़ी के मूर्तिशिल्पों की श्रृंखला में देवी–देवता व मानव आकृतियाँ बनाई गई हैं।

शीर्षकहीन (स्ट्रीट सिंगिंग कपल) मूर्तिशिल्प कांस्य धातु से बना है तथा इसकी ऊँचाई 28 इंच है। इस मूर्तिशिल्प में स्त्री व पुरूष को नृत्य व गायन की मुद्रा में बनाया गया है। स्त्री आकृति के हाथों में मंजीरें है जो बजाने की मुद्रा में हैं। दोनों के दांयें पैर ऊपर उठे हुए व पुरूष आकृति के हाथ भी नृत्य मुद्रा में कुछ ऊपर उठे हुए हैं। दोनों ने पैरों में कड़े पहने हैं व कुर्ते पर जैकेट भी पहन रखी है। इनका केश विन्यास कुण्डलाकार है। प्रस्तुत संयोजन में गति, लय एवं ऊर्जा है (चित्र सं–9)।

शीर्षकहीन (मानव और मशीन श्रृंखला) मूर्तिशिल्प 12 फीट तक ऊंचे है। इनमें मानव और मशीन के ऊर्जा स्वरूप को समन्वित करके प्रदर्शित किया गया है। इन मूर्तिशिल्पों के माध्यम से जैविक और यांत्रिक शक्तियों को एक दुसरे के सम्पूरक दिखाने का अप्रतिम प्रयास किया है, जो कि वर्तमान समय के संदर्भ में सटीक है। इसमें आधुनिकता व परम्परागत मूल्यों का सम्मिश्रण देख सकते हैं। इसमें गति एवं लय आदि को स्पष्टतः देख सकते हैं। प्रस्तुत मूर्तिशिल्प में समसामयिक विषय प्रबलता से दिखाया गया है

हिम्मत शाह –(1933ई.)

इनका जन्म 22 जुलाई को 1933ई. लोथल, गुजरात में हुआ था। इन्होंने घड़शाला, भावनगर जाकर अध्ययन कार्य किया तथा यहाँ पर जग्गू भाई शाह से कला का प्रशिक्षण प्रारंभ किया। इसके बाद जे. जे. स्कूल ऑफ आर्ट मुंबई गए। सरकार की तरफ से मिली छात्रवृत्ति द्वारा 1956 से 1960 तक बड़ौदा में रहे। इन्होंने बड़ौदा में एन. एस. बेंद्रे व के. जी. सुब्रमण्यम से कला की शिक्षा ग्रहण की। ये ग्रुप 1890 के सदस्य रहे लेकिन ग्रुप अधिक समय तक नहीं रहा। फ्रांसीसी सरकार से मिली छात्रवृत्ति के तहत 1967 में अध्ययन हेतु पैरिस गए। 1967 से 1971 में इन्होंने अहमदाबाद के सेंट जेवियर स्कूल में ईंट, सीमेंट व कंकरीट से स्मारकीय म्यूरल बनाया। इसके बाद उन्होंने टेराकोटा और कांस्य में मूर्तिशिल्पों की रचना की। इन्होंने दिल्ली में जाकर गढ़ी स्टूडियो में टेराकोटा मूर्तिशिल्पों को नए आयाम प्रदान किये। इन्होंने सन

चित्र संख्या–10 शीर्षक हीन हैड

2004–2005 में कांस्य मूर्तिशिल्पों की रचना की जिनकी ढ़लाई लंदन में की गई। उनके प्रसिद्ध मूर्तिशिल्पों में टेराकोटा और कांस्य माध्यम में बने सिर (हेड्स) हैं। सन 2000 में इन्होंने जयपुर में स्टूडियो की स्थापना की। हिम्मत शाह ने सिरैमिक, सीमेंट, कंक्रीट, जाली व लोहे के सरियों आदि विभिन्न माध्यमों में मूर्तिशिल्पों की रचना की है। कला के क्षेत्र में किए गए कार्य के लिए इन्हें अनेक पुरस्कार व सम्मान प्राप्त हुए, जिनमें साहित्य कला परिषद पुरस्कार 1988, राष्ट्रीय कालिदास पुरस्कार 2003–04 एवं गगन अकादमी पुरस्कार 2014 आदि प्रमुख हैं। ''क्या आप बीज को देखकर पूरे वृक्ष की कल्पना कर सकते हैं ? जो बीज को देखकर वृक्ष की तथा वृक्ष को देखकर बीज की कल्पना कर सकता है वह एक वास्तविक कलात्मक दृष्टिकोण का प्रतिबिम्ब है।'' – हिम्मत शाह

शीर्षकहीन हेड (2006) मूर्तिशिल्प का आकार 29.2x24x12.7 सेमी है। यह शिल्प कांस्य धातु से निर्मित है। यह आकृति मूलक विशेषता लिए हुए है। चेहरे पर आँखें गोलाई लिए हुए हैं। नाक लम्बी एवं मुँह छोटा बनाया है। साइड में हल्की व गहरी रेखाओं के द्वारा क्रास निशान बनाया है। यह सरलता व प्रतीकात्मकता के गुणों को प्रदर्शित करता है (चित्र सं–10)।

इस मूर्तिशिल्प में मानव व उसकी गूढ़ भावनाओं का प्रतीकात्मक अंकन हुआ है जो केवल अनुभव एवं कौशल से ही साकार हो सकता है। यह रचना कलाकार के विचारो, अनुभवों एवं भावनाओं के मंथन का परिणाम है जिसमें शब्द विहीन अभिव्यक्ति की गई है।

मृणालिनी मुखर्जी (1949 – 2015ई.)

इनका जन्म मुंबई में सन् 1949 में हुआ था। यह सुप्रसिद्ध चित्रकार विनोद बिहारी मुखर्जी व लीला मुखर्जी (माता) की इकलौती पुत्री थी। इन्होंने कला महाविद्यालय, वड़ोदरा से स्नातक की उपाधि सन 1970 में प्राप्त की। सन् 1970 से 1972 तक प्रो. के.जी. सुब्रमण्यमन् के निर्देशन में म्यूरल डिज़ाइन में पोस्ट डिप्लोमा प्राप्त किया। इसी समय में इन्होंने प्राकृतिक रेशों को एक माध्यम के रूप में प्रयोग करना शुरु किया। 1978 में उन्हें ब्रिटेन से छात्रवृत्ति मिली जिससे उन्होंने मूर्तिशिल्प के क्षेत्र में एक अलग पहचान बनाई। सन् 1994–95 में आधुनिक कला संग्रहालय ऑक्सफोर्ड द्वारा मूर्तिशिल्पों की प्रदर्शनी हेतु आमंत्रित किया गया। सन् 1996 में इन्होंने हॉलेण्ड में एक अंतर्राष्ट्रीय कार्यशाला में भी भाग लिया।

इन्होंने मूलरूप से रेशों का उपयोग करते हुए अनेक मूर्तिशिल्पों की रचना की। वे बंगाल व गुजरात से प्राप्त पतली रस्सियों को स्वयं के देखरेख में बैंगनी, हरे, नीले, काले व सुनहरें रंगों में रंगवाती थीं और उनका उपयोग मूर्तिशिल्प के निर्माण में करती थी। उन्होंने रेशों के अतिरिक्त कांस्य धातु का उपयोग करते हुए कई उत्कृष्ट मूर्तिशिल्पों का सृजन किया है। जूट की रस्सी, सुतली, डोरी आदि का प्रयोग कर गांठदार धरातल में त्रिआयामी प्रभाव देते हुए धातु के छल्लों का प्रयोग कर इन्होंने अपने मूर्तिशिल्पों को एक सुनिश्चित आकार व अभिव्यक्ति प्रदान की है। इनकी कला शैली आधुनिक प्रयोगवादी है तथा विषयवस्तु मुख्य रूप से प्रकृति से ही संबंधित है। इनके मूर्तिशिल्पों में वन राजा (1991 से 1994), वाटरफॉल (1975), पुरूष (1980), देवी (1981), वुमन ऑन पीकॉक (1991), पुष्प (1993), लोटस पॉण्ड–I&VIII (1995–96), पाम स्केप 2015 श्रृंखला (2015) आदि हैं। कला के क्षेत्र में अतुलनीय योगदान के लिए इन्हें देश–विदेश में काफी सम्मान मिला। फरवरी, 2015 में 65 वर्ष की आयु में इनका देहान्त दिल्ली में हो गया, जिससे मूर्तिकला के क्षेत्र में अपूर्णीय क्षति हुई है।

पाम स्केप (2015) इस कांस्य मूर्तिशिल्प में फैला हुआ सूखा तना है, जिसके शीर्ष पर बड़ी सूखी वक्राकार पत्तियां हैं। यह मूर्ति शिल्प ताड़ वृक्ष की सूखी हुई रचनाओं से संबंधित है। इसमें सूखापन व इनकी अनेक पर्तों को मुड़ते सिकुड़ते दिखाया है। मूर्तन अत्यंत सजीव है, प्रकृति की कोमलता व सहजता को बहुत बारीकी के साथ कांस्य में ढ़ालने में

चित्र संख्या–11 पाम स्केप

चित्र संख्या–12 वनराज

मृणालिनी मुखर्जी ने सफलता प्राप्त की है।

पाम स्केप की अनेक शृंखलाएं इन्होंने बहुत ही सजीवता लिए हुए बनाई है।(चित्र सं–11)

वन राजा मूर्तिशिल्प (1991–1994ई.) की रचना में रेशों (फाइबर) का उपयोग किया गया है, जिसमें वन राजा सिंह को खड़ी मुद्रा में सीधे तने हुए दिखाया है, जिसके हाथ नीचे की ओर प्रतीत होते हैं। वन राज की अभिव्यक्ति के लिये सिंहासन बनाया है, जिस पर फाइबर (रेशों) की गांठें डालकर अलग–अलग पैटर्न या नमूने बनाए है। वनराज को बैंगनी रंग व शेष शिल्प को हरे रंग के तानों के रेशे व गांठों द्वारा आकार दिया है । (चित्र सं–12)

आधुनिक मूर्तिकला में आए परिवर्तनों में पारंपरिकता व आधुनिकता का समन्वय होने के साथ–साथ विषय व तकनीक के क्षेत्र में अत्यधिक विस्तार एवं विभिन्नता देखने को मिलती है। मूर्तिकारों ने अपनी कृतियों के माध्यम से वैश्विक मंच पर अपनी कला को नई पहचान दी। आधुनिक समय में मूर्तिकला के क्षेत्र में जीवन्तता व गति का अद्भुत संचार हुआ है। विभिन्न मूर्तिकारों ने न केवल इस क्षेत्र में अत्यधिक प्रसिद्धि पाई, बल्कि विश्व बाजार में कला को नई ऊँचाईयों तक पहुंचाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

महत्वपूर्ण बिन्दु

1.आधुनिक भारतीय मूर्तिकला का प्रारम्भ 19वीं शताब्दी से माना जाता है जिसे प्रारम्भ करने का श्रेय राम किंकर बैज को दिया जाता है।

2. आधुनिक भारतीय मूर्तिकला परम्परावादी बंधन से मुक्त तथा विषय, माध्यम व अभिव्यक्ति की दृष्टि से स्वतंत्र रही।

3. रामकिंकर बैज ने सीमेन्ट व कंकरीट माध्यम में 'संथाल परिवार' एवं 'मिल–काल' जैसे अनेक मूर्तिशिल्पों की रचना की।

4. रामकिंकर बैज ने अपने मूर्तिशिल्पों में जनसामान्य की जीवन शैली व भावनाओं को सशक्त रूप से अभिव्यक्ति प्रदान की है।

5. देवी प्रसाद राय चौधरी के मूर्तिशिल्पों में शरीर संरचना का प्रभावी अंकन देखा जा सकता है। इनके मूर्तिशिल्पों (जैसे शहीद स्मारक, श्रम की विजय आदि) में गति, ऊर्जा एवं भाव का अद्भुत समन्वय किया गया है।

6. शंखो चौधरी ने लकड़ी प्रस्तर, धातु, टेराकोटा एवं संगमरमर आदि विभिन्न माध्यमों में नारी आकृतियों एवं वन्य जीवन से सम्बन्धित विषय वस्तु को अपने मूर्तिशिल्पों में साकार किया है।

7. धनराज भगत ने अमूर्तवादी शैली में कार्य करते हुए विभिन्न विषय वस्तुओं (जैसे 'कॉस्मिक मेन', शीर्षकहीन–मोनार्क श्रृंखला आदि) को ज्यामितीय आकृतियों में संजोया है।

8. बहुमुखी प्रतिभा के धनी सतीश गुजराल ने सिरेमिक, प्रस्तर, काष्ठ एवं धातु आदि माध्यमों में अपने आस–पास के परिवेश से प्रभावित होकर अनेक मूर्तिशिल्पों (जैसे स्ट्रीट सिंगिंग कपल एवं शीर्षक हीन मानव एवं मशीन श्रृंखला आदि) की रचना में गति, ऊर्जा एवं लय की आकर्षक अभिव्यक्ति की है।

9. हिम्मतशाह ने टेराकोटा, धातु (कांस्य), सीमेन्ट एवं कंकरीट आदि माध्यमों में अनेक मूर्तिशिल्पों (जैसे शीर्षकहीन हेड्स आदि) की रचना की है।

10. मृणालिनी मुखर्जी ने प्रकृति से सम्बन्धित विषयवस्तु को पतली रस्सियों एवं धातु (कांस्य) माध्यम द्वारा अपने मूर्तिशिल्पों (जैसे 'वनराजा' एवं 'पाम स्केप' आदि) में आकर्षक रूप में प्रस्तुत किया है।

अभ्यास प्रश्न

अति लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. सतीश गुजराल कौन हैं?
2. 'मिल–कॉल'' मूर्तिशिल्प के मूर्तिकार का नाम लिखिए ?
3. 'प्राकृतिक रेशों'' का प्रयोग मुख्यरूप से किस मूर्तिकार ने किया?
4. आधुनिक भारतीय मूर्तिकला का जनक किसे कहा जाता है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. पटना में स्थित शहीद स्मारक की रचना किस कलाकार ने की थी?
2. किन्हीं दो मूर्तिकारों के नाम बताइए जिन्हें पद्मभूषण से सम्मानित किया गया।
3. मृणालिनी मुखर्जी की कलाकृतियों का माध्यम क्या था?
4. हिम्मत शाह का जन्म कब एवं कहां हुआ ?
5. मूर्तिकार धनराज भगत के किन्हीं दो मूर्तिशिल्पों के नाम बताइए।
6. आधुनिक मूर्तिकला की चार विशेषताएँ बताइए।
7. देवी प्रसाद राय चौधरी के दो मूर्तिशिल्पों के नाम बताइए।

निबन्धात्मक प्रश्न

1. रामकिंकर बैज की कलाशैली पर लेख लिखिए।
2. आधुनिक मूर्तिकला से आप क्या समझते हैं व इसकी विशेषता पर प्रकाश डालिए।
3. सतीश गुज़राल का भारतीय मूर्तिकला में क्या योगदान रहा है, स्पष्ट करें।
4. प्रयोगवादी मूर्तिकला क्या है, उदाहरण सहित समझाइए।
5. रामकिंकर बैज व मृणालिनी मुखर्जी पर तुलनात्मक लेख लिखिए।